E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
IJAAS 2019; 1(1): 140-141
Received: 21-05-2019
Accepted: 26-06-2019

डॉ० सुशील कुमार चौधरी
स0 प्रा0 (राजनीति विज्ञान)
ज0ना0ब्र0आ0 संस्कृत महाविद्यालय,
लगमारामभद्रपुर, दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ० सुशील कुमार चौधरी
स0 प्रा0 (राजनीति विज्ञान)
ज0ना0ब्र0आ0 संस्कृत महाविद्यालय,
लगमारामभद्रपुर, दरभंगा, बिहार, भारत

संवेदनशील समाज एवं संस्कृतनिष्ठ भारतीय राजनीति

डॉ० सुशील कुमार चौधरी

सारांश
भारतीय राजनीति की रचना आध्यात्मवाद की सुदृढ़ आधारशिला पर हुई है। इसका प्रतिपादन उन ब्रह्मऋषियों के द्वारा हुआ है, जिनकी दृष्टि इहलोक तक ही सीमित नहीं थी। उन ऋषियों ने अपनी बुद्धि से समाधिजन्य दिव्यज्ञान के आधार पर जो राजनीतिक सिद्धान्त निश्चित किए है, वे सर्वथा भ्रान्तिशून्य सत्य और पूर्ण वैज्ञानिक है। जिनके औचित्य की परीक्षा मोहग्रस्त, संकीर्ण तथा विवेकशून्य बुद्धि से कदापि नहीं की जा सकती है।

प्रस्तावना
राजनीति के चार आधार–स्तम्भ है–चेतन ब्रह्म, मन्त्रद्रष्टा ऋषि, धारण करनेवाले धर्म और वेदशास्त्र/ऋषियों ने ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त करने के लिए जो कठिन तप किया उसी के फलस्वरूप धर्म और वेद का प्रकाश सामान्यजन को भी हुआ। धर्म को स्वतंत्र. अस्तित्व माना जाता है। वही शासनकर्त्ता और अधिपति है। विश्व की अस्थिर राजनीति को धर्म के आधार पर ही स्थिर किया जा सकता है।

ब्रह्मजाया प्राकृतिक नियमों से ही मानव जाति के अधिकारों एवं हितों की रक्षा सम्भव है। भारतीय संस्कृति इन्हीं सिद्धान्तों पर अवलम्बित है, साथ ही, जो नियम और नीतियाँ मानव–समाज के विरूद्ध है, वे त्याज्य हैं। यह सर्वमान्य है कि विश्व–ब्रह्माण्ड किसी स्थायी नियम के द्वारा परिचालित होता है। यह भी सत्य है कि मानव शरीर की रचना और अन्त भी प्राकृतिक नियमों के अन्तर्गत होता है। जगत की कोई भी क्रिया प्रकृति के प्रतिकूल नहीं होती है। दैवी शक्तियों का सभी प्राणियों पर समान रूप से नियंत्रण है। प्राकृतिक नियमों की अवहेलना करके भौतिक विकास नहीं किया जा सकता है। संसार की सभी वस्तुएँ नाशवान है, यह सर्वविदित है। यदि कोई अविनाशी है तो वह है जीवात्मा ब्रह्म और पंचतत्व। [1] प्रकृति पंचभूतों का संग्रह है। वेदों में इसे पंचभूतस्य जाया भी कहते हैं। ब्रह्म, जीवात्मा और प्रकृति के यथार्थ ज्ञान को ब्रह्मविष्णु कहते हैं जो समकालीन समाज के लिए प्राणतुल्य है।

धर्म की तेरह सहचरियाँ हैं–श्रद्धा, लक्ष्मी, कृति (धैर्य) तुष्टि, मेधा, क्रिया, बुद्धि, लज्जा, वपु (रूप), शान्ति और कीर्ति। धर्म के साथ इनका सहयोग होने से क्रमशः कामना, मान–सम्मान, नियम, संतोष, लोभ श्रुत (सुना हुआ ज्ञान), न्याय और विनय बोध, विनय, व्यवसाय, क्षेम, सुख और यश प्राप्त होता है। [2] नीति अथवा राजनीति की यही भौतिक उपलब्धियाँ है। इन्हीं के लिए मानव–प्राणी यत्नशील रहते हैं। धर्म के इस वृहदक में मानव वैयक्तिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र में उन्नति की चरम सीमा तक पहुँच सकता है।

राजनीति के दो मार्ग हैं–ऋत और सत्य। ऋग्वेद में सृष्टि (सृष्टि) उत्पत्ति के प्रसंग में ऋत और सत्य दोनों साथ–साथ प्रयुक्त हुए है। [3] ऋत वह प्राकृतिक नियम है जिससे पृथ्वी, सूर्य और चन्द्र आदि ग्रह गतिमान है, जिससे दिन और रात का क्रम चलता रहता है। ऋतुएँ आया जाया करती है। प्राणी जन्म लेते और मृत्यु को प्राप्त करते हैं। सत्य वह विद्या है जे जीवात्मा, ब्रह्म और प्रकृति के यथार्थ ज्ञान का बोध कराती है। जिस मार्ग का मानव अनुशरण कर चैन की नींद सो सकता है।

कभी–कभी सत्य को शुद्ध धर्म और ऋत को आप धर्म माना जाता है, जिसका ज्वलन्त प्रमाण श्रीमद्भागवत में की गई ऋत की वह व्याख्या प्रस्तुत की जाती है, जिसमें यह कहा गया है कि ऋतुप्रिय सत्य वाणी है प्रिय सत्य जहाँ कानों को सुहावना लगने के लिए अलंकार मिश्रित होता है, जबकि शुद्ध सत्य वास्तविकता का द्योतक होने से कटु भी हो सकता है।

जहाँ तक ऋषि प्रशस्त कल्याणकारी राजनीति का प्रश्न है? नीति और स्मृति ग्रन्थों के रूप में देखने को मिलती है। जीवन का मार्ग सुगम और सर्वहितकारी बनाने के लिए प्राकृतिक नियमों को ध्यान में रखकर उनकी रचना हुई है। भौतिकवादियों को इसमें अन्धविश्वासों की गन्ध आ सकती है। किन्तु भौतिक सुख आध्यात्मिक आनन्द का वह भाग है, जो इस शरीर के द्वारा भोगा जाता है। भौतिकवादी उसी की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहते हैं।

भौतिक पदार्थो की प्राप्ति के लिए किया जानेवाला प्रयत्न विफल हो सकता है, लेकिन आध्यात्मिक आनन्द के लिए ऋत और सत्य का विचार करके किया गया कार्य कभी विफल नहीं हो सकता।

राजनीति में सत्य और सत्य भाषण की प्रधानता है। राजा के लिए सत्य ही सर्वाधिक पूजनीय है। हिंसारहित सत्य ही राजा का सनातन धर्म है। राज्य का स्वरूप सत्यात्मक है। सत्य से ही जगत प्रतिष्ठित है। सत्य ही राजा के कार्यो की कसौटी है। संसार का प्रभु सत्य ही है। सत्य से आगे कोई शक्ति नहीं है। दान, यज्ञ, होम, तपस्या और वेद इन सबका आश्रय सत्य ही है। अतः हमें सत्य परायण होना चाहिए। दूसरे शब्दों में, सत्य का त्याग करने पर मानवजाति का पतन अवश्यम्भावी है। जिसका ज्वलन्त प्रमाण है कि आज का मानव वैज्ञानिक चमत्कारों से लैस होने के बावजूद मानसिक शान्ति नहीं मिलती है।

ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर 'ऋतस्यपंथा' का प्रयोग हुआ है। [4] अथर्ववेद में भी ऋत के साथ 'पथ' प्रयुक्त हुआ है। [5] जिसका अर्थ है 'ऋत का मार्ग'। अवश्य ही वह कोई निश्चित मार्ग है जिस पर चलकर मानव अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँच सकता है। जैसे–सूर्य, चन्द्र और पृथ्वी आदि ग्रह अपने निश्चित मार्ग पर ही चक्कर लगाते हैं, वैसे ही मानव के लिए भी कोई सुनिश्चित मार्ग है जिसपर चलने से वह इस जीवन को सफल बना सकता है। वह मार्ग है, धर्माचरण और सत्य का पालन। इसलिए महात्मा गाँधी ने 'Truth is God' कहकर पुकारे हैं। पथभ्रष्ट मनुष्य कभी जीवन में सफल नहीं हो सकता। अथर्ववेद में तो स्पष्ट शब्दों में कहा गया है कि ऋत का मार्ग प्रजा, राष्ट्र और धर्म तीनों की रक्षा करता है।

अतएव यह प्रतीत होता है कि वेदों और स्मृतियों में राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और वैयक्तिक क्षेत्रों में प्रगति करने की दिशा निश्चित है। जिस निर्दिष्ट मार्ग पर चलकर राष्ट्र को हर क्षेत्र में विकसित और समृद्धिशाली बनाये जा सकते हैं। शुद्ध सत्यमार्ग से कार्य की सिद्धि में बाधा उत्पन्न होने पर आप धर्म का आश्रय लेकर कुछ हेर–फेर किया जा सकता है। किन्तु सत्य से दूर हटकर असत्य मार्ग अपनाना अपराध है।

इसके साथ ही मानव जीवन में न्याय का स्थान प्रमुख है। राजनीति पर न्याय का पूर्ण प्रभाव होना स्वाभाविक है। न्याय और राजनीति का अटूट सम्बन्ध है। न्याय की कसौटी पर परीक्षा किए बिना निश्चित की गई नीतियाँ शासन और देश दोनों के लिए अहितकर सिद्ध होती है। यही कारण है कि प्राचीन शास्त्रों में शासकवर्ग को मनमानी नीति से विरत रहने का निर्देश दिया गया है।

न्याय की आवश्यकता सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और वैयक्तिक चारों क्षेत्रों में होती है। तथाकथित प्रगतिवादी विचारक सामाजिक और आर्थिक न्याय की बातें अधिक करते हैं। कभी–कभी राजनीतिक न्याय पर भी विचार किया जाता है। सामाजिक और आर्थिक न्याय की कल्पना पिछड़े वर्गो के जीवन स्तर को ऊपर उठाकर तथा आर्थिक विषमता दूर करके की जाती है।

वरूण से मुक्ति अथवा रक्षा की कामना की गई है। शासन की नीतियाँ जनरक्षक होनी चाहिए। समाज के किसी वर्ग अथवा प्राणी को राजनियम कष्ठदायी नहीं होनी चाहिए। प्रायः व्यवहार में ऐसा देखा जाता है कि मानवकृत नियम समाज के एक वर्ग के लिए लाभदायक और दूसरे वर्ग के लिए हानिकारक होते हैं। यदि शासन में किसी को कष्ट देने की व्यवस्था हो, तो वह हो समाज व जनविरोधी तत्त्वों की।

वैदिक शासन–प्रणाली में शासक वर्ग की भावना का कोई स्थान नहीं है। भावनाओं को प्रमुखता देने से वादों का उदय होता है। वाद आपसी संघर्षो को जन्म देते हैं। संघर्ष अशान्ति और आन्दोलनों के कारण होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि मन्त्र द्रष्टा ऋषियों ने इन समस्याओं का अनुमान हजारों वर्षो पूर्व ही लगा लिया थ। इसीलिए शासन में भावनाओं के आधार पर नीतियों की रचना निषिद्ध है। वेदों में शासन को सुचारू रूप से चलाने के लिए निश्चित दिशा दी गई है जो विकसित राजनीति का परिचायक है।

गायत्री मंत्र में जन–विरोधी देवं अर्थात् ब्रह्म की स्तुति इसलिए की गई है कि 'वह जगत का प्रकाशक और उत्पादक, वरण व स्वीकार करने योग्य और पवित्र है। वही सबका धारणकर्त्ता है। वह स्तुतिकर्त्ता की बुद्धि को सत्यमार्ग की ओर प्रेरित करें। 'ऐसा देखा गया है कि शासन की नीतियाँ तभी जन विरोधी होती है, जब शासक वर्ग को बुद्धि प्रभुता के कारण मंदाध हो जाती है। बुद्धि पर ज्ञान के द्वारा नियंत्रण रखने के उसके विकृत होने की सम्भावना नहीं रहती है।

वैदिक मन्त्रों के द्वारा विविध शान्ति (आधिदैविक आध्यात्मिक और भौतिक) की कामना की गई है। वेदमंत्रों के भौतिक पक्ष की सिद्धि मुख्यतया शासन की नीतियों पर निर्भर करती है। नीतियाँ सर्वसुखाय को ध्यान में रखकर निर्धारित की जानी चाहिए, जिससे भौतिक एवं आध्यात्मिक शान्मि मिल सकती है। अथर्ववेद के एक मन्त्र में तो राजा को समस्त बन्धनों को छुड़ाने वाला कहा गया है।

'सर्वाधामानि' अर्थात लोक में मनुष्य को सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक बन्धन अधिक कष्टदायी होते हैं। उपर्युक्त दो बन्धन से मनुष्य अपने प्रयत्नों से भी छुटकारा पा सकता है। किन्तु राजनीतिक बन्धन से मुक्ति पूर्णतया शासन की नीतियाँ पर निर्भर करती है।

भारतीय राजनीति में मानव धर्मशास्त्र आदि के प्रणेता ''मनु, जिन्हें यह धर्मशास्त्र प्रत्यक्ष रूप से ब्रह्मा के द्वारा प्राप्त हुआ। तदुपरान्त मनु मरीचि आदि ऋषियों को हस्तान्तरित किया। फिर मनु के शिष्य मृगु ने इस धर्मशास्त्र का ज्ञान अन्य ऋषि–मुनियों को दिया।'' [8] अर्थप्रधान विचारधारा के प्रणेता वृहस्पति हैं जिनके अनुसार राजशास्त्र अर्थ अधीन है, उसकी उपलब्धि पर ही अन्य पदार्थो की उपलब्धि संभव है। जिसका समर्थन ''कौटिल्य ने नवीन अर्थशास्त्र में किया।'' [9] दण्डप्रधान राजनीतिशास्त्र विषयक प्रवर्तक वैदिककालीन ऋषि शुक्र है और शुक्रनीति इनकी रचना है। जो ब्रह्मा ने शुक्र से तदुपरान्त वशिष्ट एवं अन्यान्य ऋषि मुनि ने प्राप्त किये।

निष्कर्ष

अतएव भारतीय संस्कृति जिसकी राजनीति एक शाखा है, की आधारशिला आध्यात्मिकता है। वह आध्यात्मिकता कोरे काल्पनिक दार्शनिक सिद्धान्तों पर नहीं वरन् प्रामाणिकता पर आधारित है। आत्मा की अमरता और नित्यता ही भारतीय संस्कृति की नींव है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:

1. आकाश, वायु, अग्नि,जल एवं पृथ्वी।
2. मार्कण्डेय पुराण में श्रद्धा आदि को दक्ष को तेरह कन्याएँ बताई गई है, जिनको धर्म के पत्नीरूप में ग्रहण किया है। कामनाआदि इन दोनों के पुत्र कहे गए हैं।
3. ऋत एवं सत्य च। 10/190/1
4. ऋग्वेद– 9/7/1
5. अथर्ववेद–8/9/18
6. ऊँ तत्सवितुरवरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदया यजुर्वेद–36/5
7. कृतव्रतो राजा सर्वाधमति मुज्वतु–अथर्ववेद–7/83/1
8. अर्थशास्त्र, अधिकरण–1, अध्याय–1, श्लोक–35
9. अर्थशास्त्र, अधिकरण–1, अध्याय–7, श्लोक–10